# शिव का रहस्य

देवदत्त पटनायक

# शिव का रहस्य

## देवदत्त पटनायक

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

# शिव का रहस्य

**प्रत्याहार से विनाश**

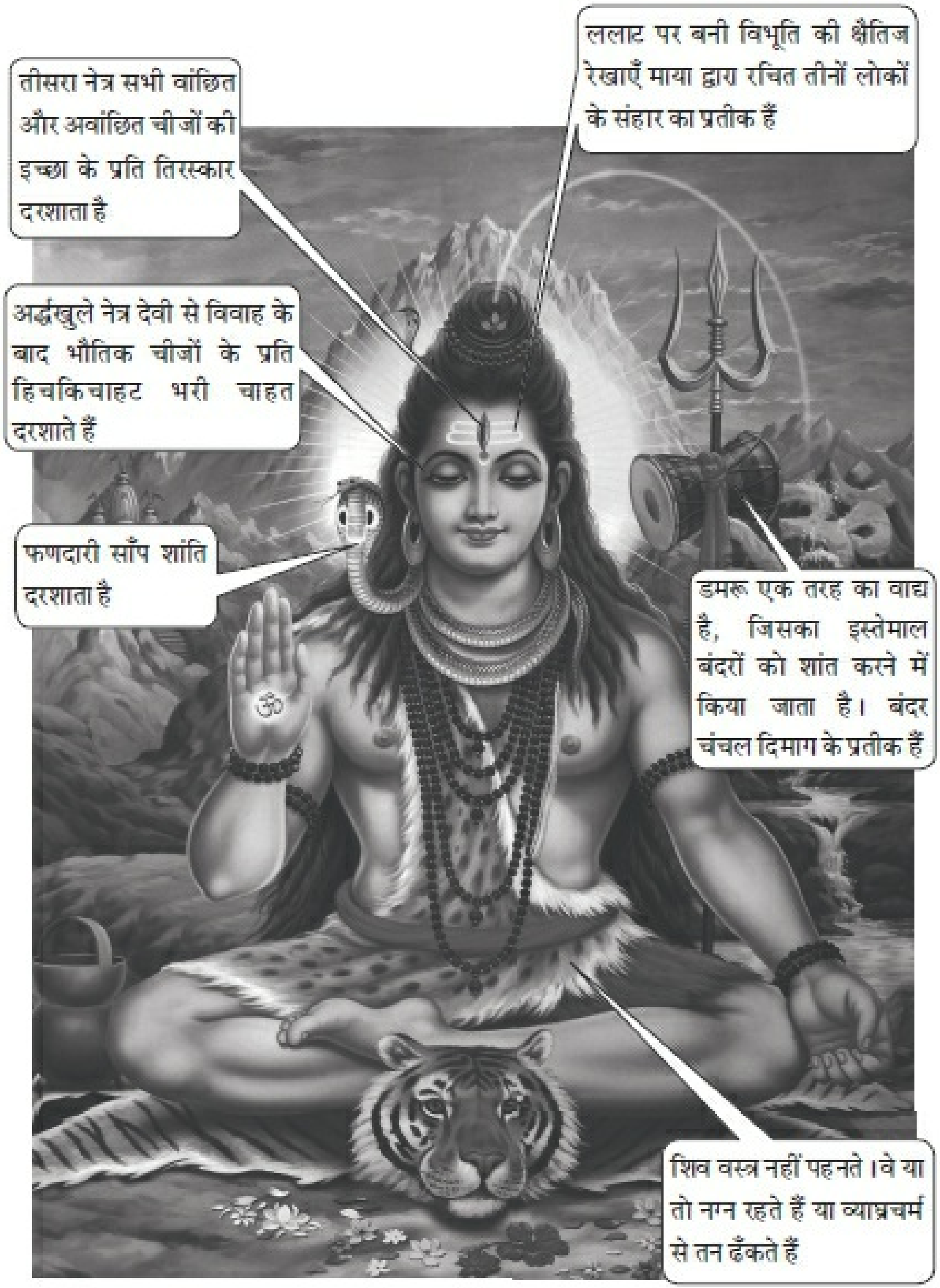


**आकृति 4.1 संहारकर्ता शिव**

आकृति 4.1 में हिमाच्छादित पर्वत पर एक गुफा में व्याघ्रछाला पर बैठे हुए एक तपस्वी को दिखाया गया है। ये

शिव हैं, जिन्हें आमतौर पर संहारक के रूप में जाना जाता है। शिव संहार करते हैं, लेकिन वे किस चीज का संहार करते हैं? परंपरागत रूप से संहार को चीजों के नष्ट होने, कोप और क्रोध से जोड़ा जाता है; लेकिन शिव शांत और प्रकृतिस्थ हैं। उनकी आँखें नीचे की ओर झुकी हुई हैं, आधी बंद। ऐसा लगता है कि उनकी रुचि लोगों को दर्शन देने में नहीं है। वे विरक्त हैं। तो वे संहारक कैसे हो सकते हैं?

दरअसल समस्या संहार के बारे में हमारी समझ का है। शिव क्या संहार करते हैं? धर्मग्रंथों में बार-बार कहा गया है कि वे कामांतक, यमांतक और त्रिपुरांतक, यानी काम के संहारक, यम के संहारक और त्रिपुर के संहारक हैं। इसका अर्थ यह है कि शिव इच्छा, मृत्यु और तीनों दुनिया के संहारक हैं।

वे अपने तीसरे नेत्र से ज्वाला निकालते हैं, जो काम को जलाकर भस्म कर देती है। काम वह देवता हैं, जो हमारे भीतर वासना पैदा करते हैं। शिव इच्छा भड़कानेवाले, यानी वासना पैदा करनेवाले का संहार कर देते हैं। शिव किसी चीज की इच्छा नहीं करते। वे यम का भी संहार करते हैं। यम मनुष्य की मृत्यु और उसके पुनर्जन्म पर नजर रखते हैं। वे कर्म का लेखा-जोखा भी रखते हैं। यम का संहार कर शिव कर्म का भी संहार कर देते हैं। यह कर्म ही है, जो जीवन-चक्र को घुमाता है। यम के संहार से मृत्यु नहीं होती, पुनर्जन्म नहीं होता। इस तरह जीवन का पहिया रुक जाता है। काम और यम के संहार के बाद त्रिपुर या तीनों लोकों का संहार होता है। ये तीनों लोक कौन से हैं? वेदों के अनुसार, ये पृथ्वी, वायुमंडल और आकाश हैं। पुराणों के अनुसार, इनके नाम पृथ्वी, पाताल और आकाश हैं। शायद ये लोक यथार्थ नहीं हैं, काल्पनिक हैं। इनकी रचना हमारे विचारों और अनुभूतियों से हुई है। इस तरह तीनों लोक हमारी निजी दुनिया हैं, सार्वजनिक दुनिया हैं। शिव जीवन संबंधी हमारी इच्छाओं का नाश करते हैं, मृत्यु के भय का नाश करते हैं, हमारी इर्द-गिर्द की दुनिया से संबंधित हमारी जरूरतों का नाश करते हैं।

भस्म विनाश के साथ-साथ स्थायित्व का भी प्रतीक है, क्योंकि इसका

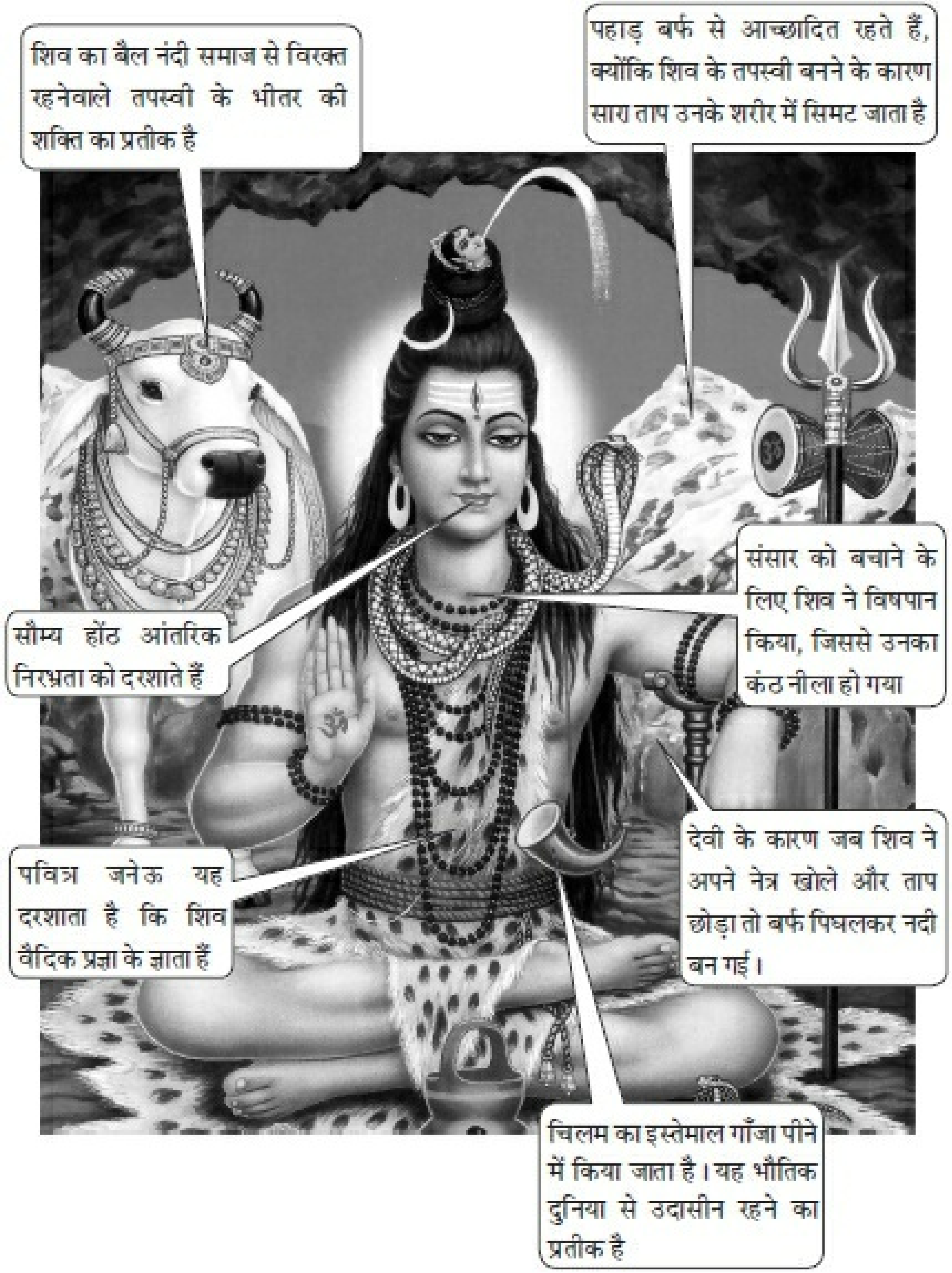


**आकृति 4.2 शुभचिंतक शंकर**

सृजन चीजों के जलने से होता है; लेकिन भस्म को खुद नहीं जलाया जा सकता। इस तरह यह अनश्वर आत्मा का प्रतीक है। भौतिक तत्त्व को जब जलाया जाता है तो उसमें से आत्मा निकलती है। शिव के ललाट पर भस्म की तीन अनुप्रस्थ रेखाएँ हैं। इन रेखाओं को उन तीन लोकों का प्रतीक माना जाता है, जिनका संहार किया गया है। और इनका क्षैतिजाकार होना जड़ता, गतिशीलता का अभाव और विघटन की अवस्था दरशाता है।

शिव का त्रिशूल तीनों लोकों के एक लोक में विघटित होने का प्रतीक है। हिंदू जगत् में सृजन तभी होता है, जब

कर्ता और कर्म के बीच विभाजन हो जाता है, जब प्रेक्षक और प्रेक्षण के बीच अलगाव हो जाता है। शिव संहार करते हैं। और वे यह काम कर्ता व कर्म के बीच विभाजन, प्रेक्षक व प्रेक्षण के बीच अलगाव को नष्ट कर करते हैं। इस तरह तीनों लोक एक हो जाते हैं।

लेकिन शिव संहार कैसे करते हैं? अपनी आँखें बंद कर, प्रेक्षक बनने से इनकार कर। इस तरह वे प्रेक्षण का सृजन नहीं करते। यह बाहरी दुनिया से नाता टूटने का संकेत है। शिव कुछ भी नहीं देखते या सुनते हैं। शिव की बंद आँखें संसार, काम, यम और त्रिपुर के प्रति उनकी अनासक्ति की संकेत हैं। वे अपने पीछे खड़े बैल की तरह हैं, जैसा कि आकृति 4.2 में दिखाया गया है सक्षम, ताकतवर, लेकिन समाज से अलग पूरी तरह से स्वतंत्र। वे संसार से नहीं छिपते; उन्हें संसार की जरूरत नहीं है। गहरी निद्रा में पड़े नारायण की तरह वे आत्मसंतुष्ट हैं। वे सर्वोच्च योगी हैं शांत और निरभ्र। साँप, जो फण काढ़े उनके गले के चारों ओर लिपटा हुआ है, पर्वत जिस पर वे बैठे हुए हैं और बर्फ, जो उनके चारों तरफ फैली हुई है, बार-बार स्थिरता के भाव का संचार करती है।

कहानियों में शिव को उठे हुए लिंग के साथ नग्न बताया जाता है। चूँकि इस तरह की तसवीर से आम लोगों में असहजता पैदा होती, इसलिए शिव को व्याघ्रचर्म पहना दिया गया है। व्याघ्रचर्म इस बात का प्रतीक है कि शिव मानव-निर्मित कपड़े नहीं पहनते। योगी के रूप में वे वही पहनते हैं, जो प्रकृति उपलब्ध कराती है।

आकृति 4.3 में दरशाया गया शिवलिंग बहुत अधिक जिज्ञासा पैदा करता

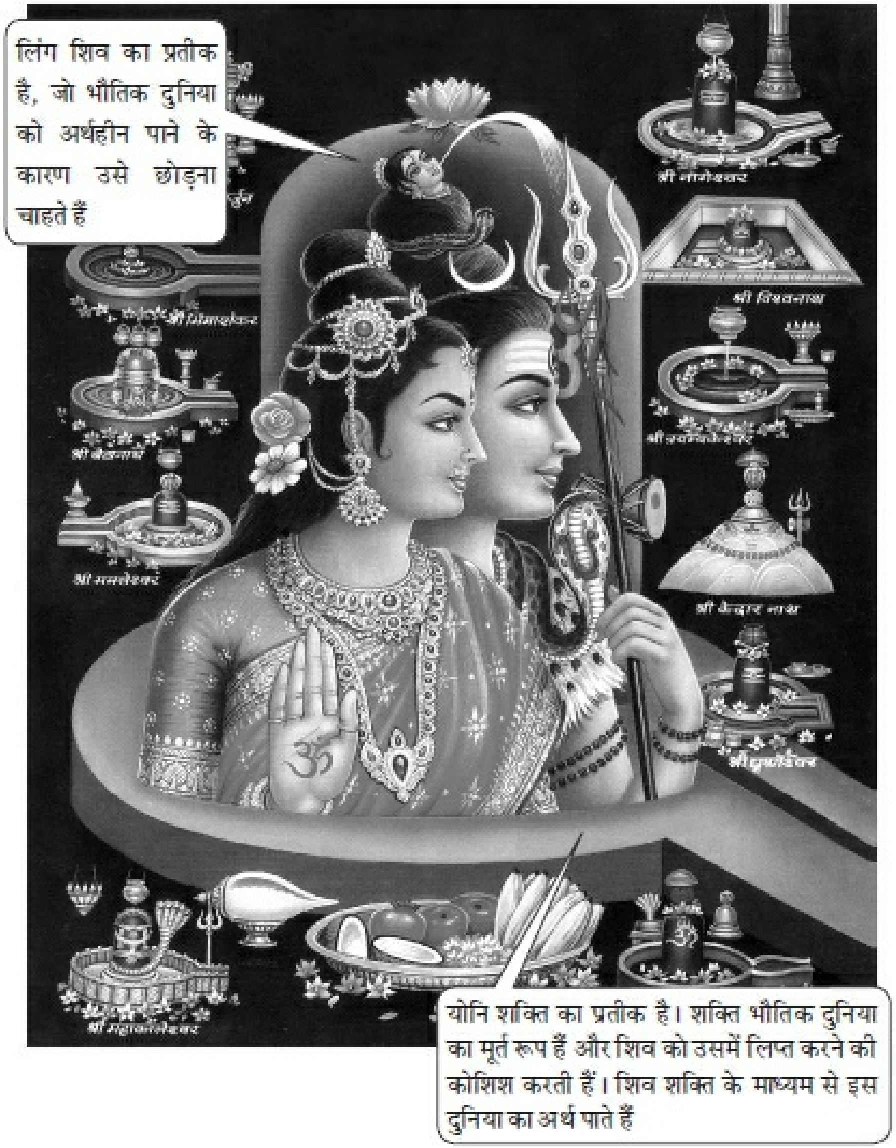


**आकृति 4.3 लिंग-योनि**

है। लोग आनन-फानन में यह निष्कर्ष निकाल लेते हैं कि शिवलिंग जनन क्षमता का प्रतीक है। ऐसे में आश्चर्य होता है कि कोई संहारक जनन क्षमता का स्रोत कैसे हो सकता है? इसका सबसे आसान उत्तर यह है कि जो संहारक होता है, वह सर्जक भी होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि जो सर्जक है, वह संहारक भी है। ऐसे में ब्रह्मा और शिव को एक ही होना चाहिए। फिर, शिव को क्यों पूजा जाता है और ब्रह्मा को नहीं? जाहिर है, स्रष्टा कुछ ऐसी चीजों की सृष्टि करता है, जिसके कारण उसे पूजा नहीं जाता। इसके विपरीत, संहारक कुछ ऐसी चीजों का संहार करता है, जिसके कारण उसे पूजा जाता है। यहाँ समस्या हमारे दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। मान लीजिए, कोई व्यक्ति गणेश के रहस्य (अध्याय 1) को जान लेता है और इस तथ्य को स्वीकार करता है कि विभिन्न लोग दुनिया को विभिन्न नजरिए से देखते हैं। ऐसे में वह इस बात को बेहतर तरीके से समझ सकता है कि स्रष्टा का अर्थ विभिन्न संस्कृतियों में विभिन्न चीजों से होता है। शिव इच्छा और कर्म का संहार करते हैं, इसलिए वे पूजनीय हैं।

शिव के ऊर्ध्व लिंग को उनके बंद नेत्रों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। अपनी पत्नी के बिना अकेले बैठे शिव अपने नेत्रों को बंद कर लेते हैं। यह ऐसी आकृति है, जो तपस्वियों को आकर्षित करती है; लेकिन कैलेंडर आर्ट परिवारों के लिए होता है, जो खुले नेत्रोंवाले शिव को देखना पसंद करते हैं। सो, भक्तों को संतुष्ट करने के लिए कलाकार अद्र्ध-उन्मिल शिव का चित्र बनाते हैं। शिव के बंद नेत्रों का बहुत महत्त्व है। आमतौर पर ऊर्ध्व लिंग को उत्तेजना का प्रतीक माना जाता है। यह इंद्रियजन्य उद्दीपन की प्रतिक्रिया है। लेकिन चूँकि शिव के नेत्र बंद हैं, इसलिए उन्हें इंद्रियजन्य उद्दीपन की अनुभूति नहीं होती। जाहिर है, उत्तेजना स्वयंभू, स्वत: उद्दीप्त है, न कि बाहरी उत्तेजना का नतीजा। यह दरअसल आंतरिक परमानंद का परिणाम है। इस तरह ऊर्ध्व लिंग रस या भौतिक आनंद का कोई काल्पनिक प्रतीक नहीं है, बल्कि आनंद या आध्यात्मिक परमानंद का प्रतीक है, जो आत्मसंतुष्टि से पैदा होता है। इसलिए शिव प्रेक्षण की जरूरत को व्यर्थ बना देते हैं। वे भौतिक दुनिया को न तो महत्त्व देते हैं और न ही उसकी परवाह करते हैं। मिथकीय भाषा में कहें तो उन्हें देवी

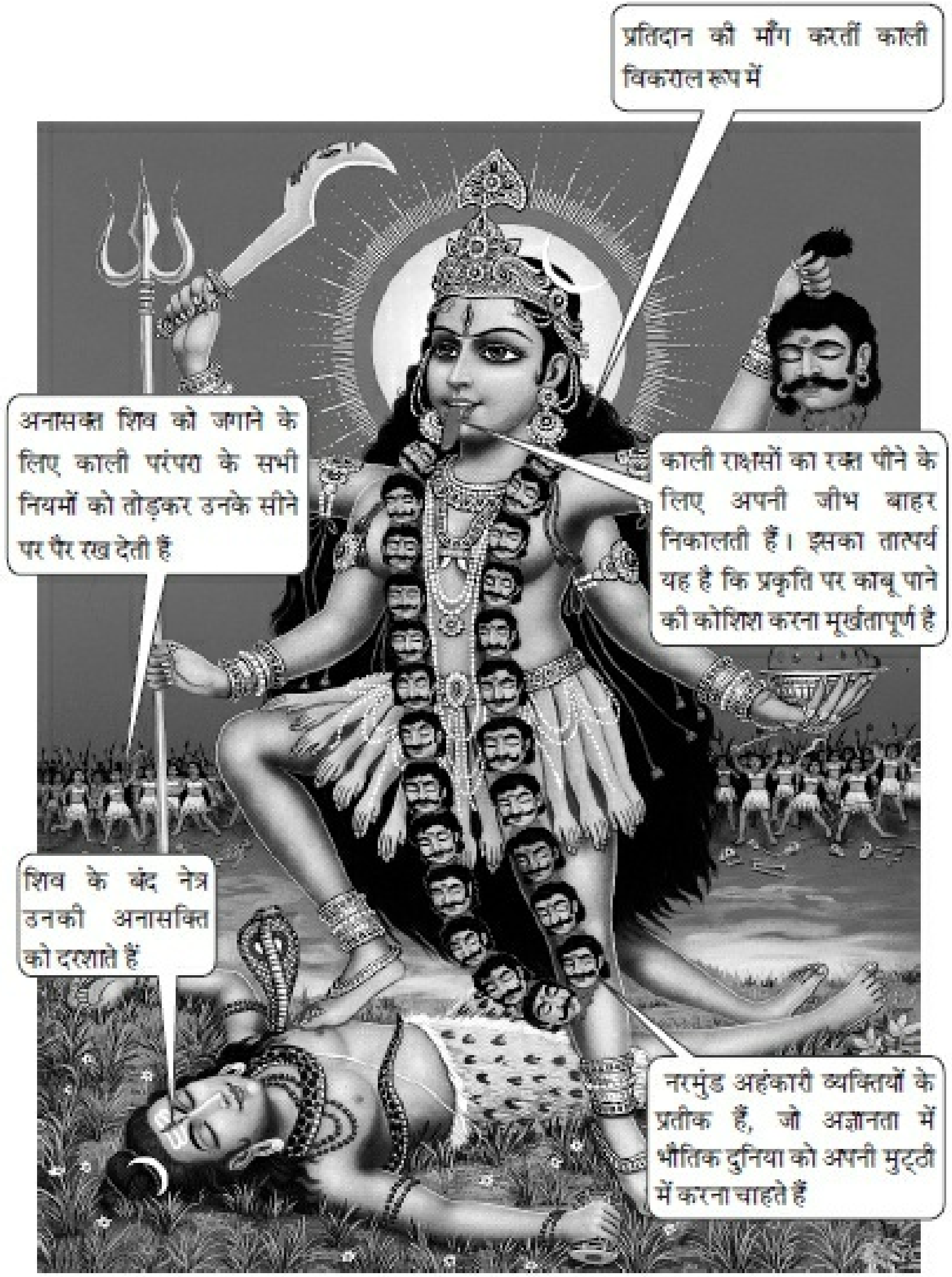


**आकृति 4.4 शिव के सीने पर काली के पैर**

की जरूरत नहीं है; लेकिन सृष्टि नारी के बिना कहाँ संभव है!

जिस तरह दक्षिण के बिना उत्तर का अस्तित्व नहीं है, जिस तरह दाएँ पार्श्व के बिना बाएँ पार्श्व का अस्तित्व नहीं है, जिस तरह गतिशीलता के बिना स्थिरता अर्थहीन है, उसी तरह प्रेक्षण के बिना प्रेक्षक का कोई अर्थ नहीं है। महादेव को महादेवी की जरूरत है। इसलिए संहारक के नेत्र खुलने ही चाहिए। यही वजह है कि महादेवी अपने आदि रूप काली में परिवर्तित हो जाती हैं और शिव के ऊपर नृत्य करती हैं।

आकृति 4.4 में नग्न काली को दिखाया गया है (लोगों की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए उनके शरीर के कुछ हिस्सों को ढँक दिया गया है)। पृथ्वी पर उदासीन पड़े शिव के ऊपर वे नृत्य कर रही हैं। शिव की अवस्था प्रयास के अभाव का संकेत है। शिव दुनिया की परवाह नहीं करते। उनके लिए कुछ भी मायने नहीं रखता। दूसरी तरफ काली नग्न, अनलंकृत, शुद्ध और सभ्यता की नजरों से अप्रभावित हैं। वे दिखना चाहती हैं। वे चाहती हैं कि शिव भौतिक सच्चाई का महत्त्व समझें और उसपर ध्यान दें। वे चाहती हैं कि शिव अपने नेत्र खोलें और प्रेक्षक बनें।

काली गतिशील हैं, शिव स्थिर हैं। काली ऊर्ध्वाधर हैं और शिव क्षैतिज। काली दक्षिण में रहती हैं, जहाँ यम के रूप में मृत्यु भी रहती है। शिव उत्तर में रहते हैं स्थिर ध्रुवतारा, हिमाच्छादित पर्वत की तरह। काली अपने भीतर जीवन का सृजन करनेवाली नारी हैं, जबकि शिव नारी के बिना जीवन का सृजन करनेवाले पुरुष हैं। लेकिन जब तक शिव काली के साथ मैथुन नहीं करेंगे, जीवन का सृजन नहीं होगा। इसलिए, वे शिव के ऊपर बैठ जाती हैं (जैसा कि आकृति 4.5 में दिखाया गया है) और उन्हें अपने भीतर जीवन का सृजन करने के लिए विवश करती हैं। यहाँ देवी के हाथों में वे सभी चीजें हैं, जो काम और यम से संबंधित हैं। गन्ने का धनुष और पुष्प बाण काम से संबंधित हैं तो कुल्हाड़ी और फंदा यम से जुड़े हुए हैं। इस तरह देवी जीवन और मृत्यु को पुन: अस्तित्व में लाती हैं। वे पुनर्जन्मों के पहिए को घुमाती हैं, ताकि लोग एक बार फिर जीने की कामना करें और मृत्यु से डरें। इन दोनों मनोभावों के कारण

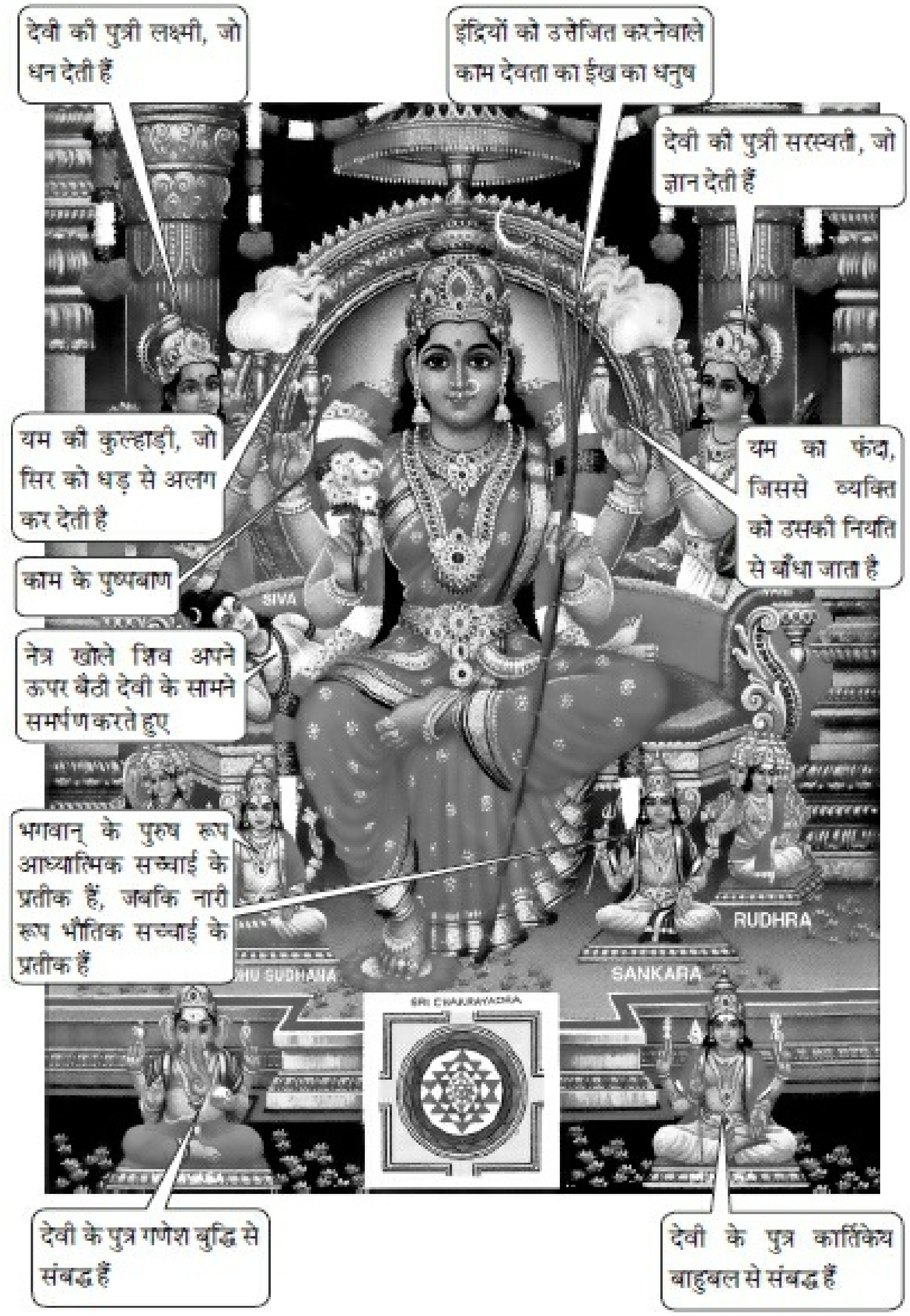


**आकृति 4.5 अपने सारे ऐश्वर्य में देवी राज-राजेश्वरी**

मनुष्य दौलत और ज्ञान के पीछे भागता है। आकृति में लाल परिधान पहने हुए धन की देवी लक्ष्मी और सफेद परिधान पहने हुए ज्ञान की देवी सरस्वती देवी के दोनों तरफ खड़ी हैं। देवी के इस रूप को त्रिपुर सुंदरी कहते हैं, जिनके भीतर तीनों लोकों की सुंदरता है। ये वही तीनों लोक हैं जिनका शिव ने संहार किया था। तीनों लोकों की भस्म शिव के ललाट पर लगी हुई है।

आकृति 4.4 में दिखाई गई देवी आकृति 4.5 में दिखाई गई देवी से बहुत भिन्न हैं। पहली आकृति में वे उग्र, नग्न, काली और हिंसक दिखती हैं और दूसरी आकृति में वे सौम्य, वस्त्रधारी, सुंदर एवं स्नेही लगती हैं। पहली आकृति में शिव अपने नेत्र खोलने से इनकार कर रहे हैं। दूसरी आकृति में उन्होंने अपने नेत्र खोल दिए हैं। पहली आकृति में देवी क्रोध से भरी हुई हैं, क्योंकि आत्मा उदासीन है और दुनिया को मन की अशांति, गर्व, असुरक्षा और अहंकार से बचना होगा। दूसरी आकृति में देवी संतुष्ट हैं, क्योंकि आत्मा उन पर ध्यान दे रही है, मन शांत है और अहंकार गायब है। आकृति 1.1 में दिखाया गया है कि महादेव और महादेवी ने दो पुत्रों हाथी के सिरवाले गणेश और भालाधारी कार्तिकेय को जन्म दिया है। गणेश समृद्धि के प्रतीक हैं और कार्तिकेय बल के।

इन दोनों आकृतियों में महादेव का दर्जा महादेवी से नीचे है। कुछ विद्वानों के अनुसार, यह इस बात का संकेत है कि देवताओं के वर्चस्व वाले हिंदू धर्म में शैव और वैष्णव संप्रदाय के विपरीत शाक्त संप्रदाय मातृसत्तात्मक था। बहरहाल, प्रतीकात्मक नजरिए से देखें तो यह एक विचारधारा है, जिसमें भौतिक तत्त्व को उतना ही महत्त्व दिया गया है जितना कि आध्यात्मिक तत्त्व को। इसके अतिरिक्त, एक ऐसे देश में, जहाँ उत्तरोत्तर मठवाद बढ़ता जा रहा था, प्रजनन और पारिवारिक प्रथाओं का बहुत सम्मान किया जाता था।

आकृति 4.6, जिसमें शिव को विवाह करते हुए दिखाया गया है, दक्षिण भारत में बहुत लोकप्रिय है। मंदिरों की दीवारों पर यह आकृति प्राय: पाई जाती है। दुलहन महादेवी हैं और उनकी दाएँ ओर खड़े विष्णु उन्हें रास्ता दे रहे हैं। स्थानीय स्तर पर विष्णु को महादेवी का भाई माना जाता है। विष्णु संरक्षक की भूमिका निभाते हैं। वे जानते हैं कि जब तक शिव तपस्वी हैं, सृष्टि को उदासीनता और विनाश से खतरा है। इसलिए, शिव को किसी भी तरह दुनिया

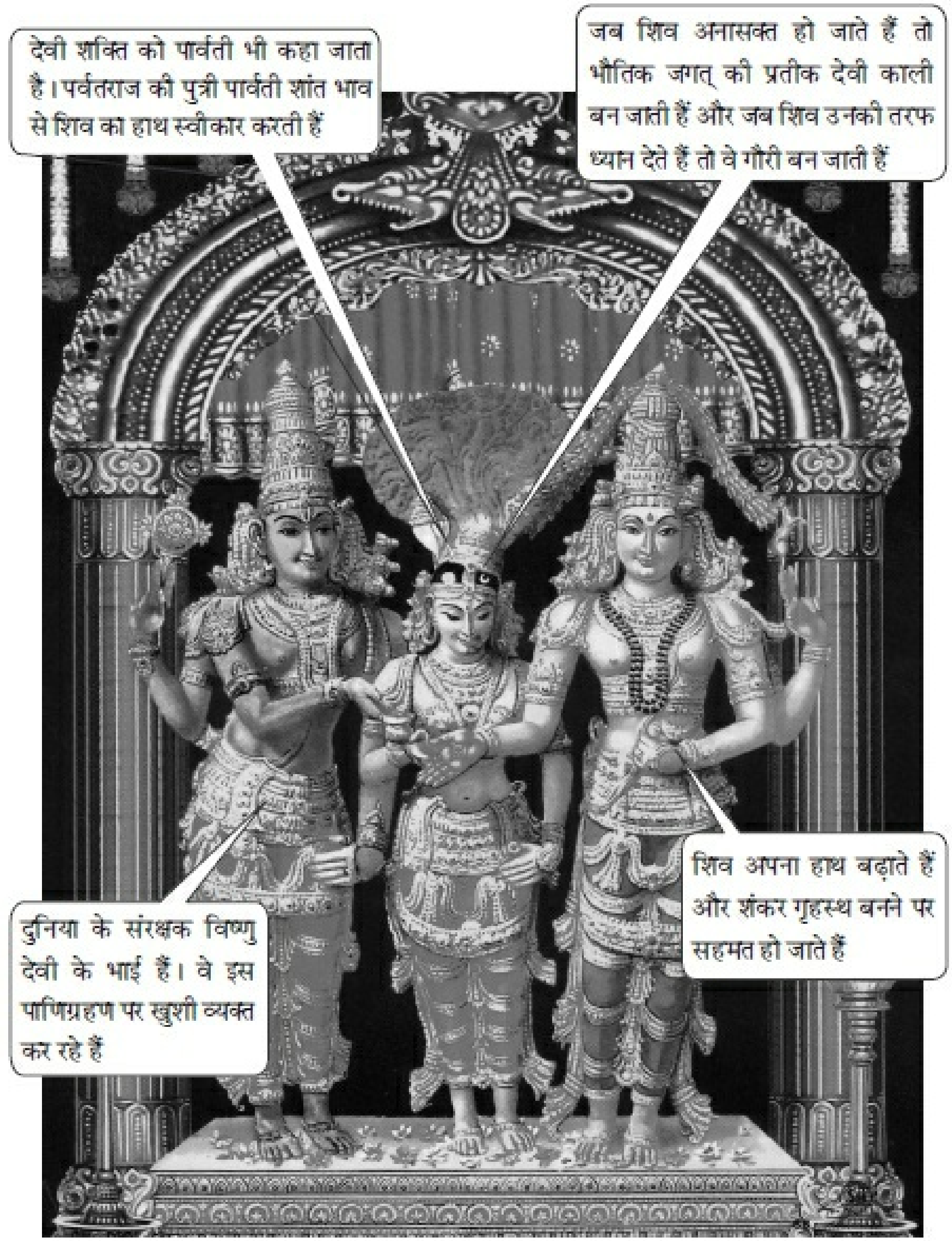


**आकृति 4.6 शिव और शक्ति का विवाह**

के प्रति आकर्षित करने और महादेवी से विवाह कराने की जरूरत है। आकृति में शिव सजे-धजे हैं, जिसका अर्थ यह है कि उन्होंने तपस्वी का चोला उतार दिया है। वे शंकर बन रहे हैं और दुनियावी रास्ते पर चलने को तैयार हैं; लेकिन इस तरह मामला हमेशा नहीं था।

आकृति 4.7 में शिव जनश्रुति की विभिन्न घटनाओं को दरशाया गया है, जो शिव के तपस्वी से गृहस्थ बनने की ओर ध्यान खींचती हैं। शिव का पहला विवाह अनर्थकारी साबित हुआ था। उनकी पत्नी सती एक पुजारी दक्ष की पुत्री थीं। शिव जो कुछ थे, सती ने उन्हें उसी रूप में स्वीकार कर लिया था। शिव जहाँ-जहाँ जाते थे, सती भी उनके साथ-साथ जाती थीं; लेकिन सती के पिता ने अपनी बेटी की पसंद को असह्य पाया। शिव का योगी रूप उन्हें नहीं भाता था। इसलिए, जब दक्ष ने एक यज्ञ करने का फैसला किया तो उन्होंने शिव को छोड़ सभी को आमंत्रित किया। सती ने इस अपमान से कुपित होकर, जिस पर शिव ने ध्यान नहीं दिया, यज्ञ में अपनी जान दे दी। इससे क्रुद्ध होकर शिव ने यज्ञ की वेदी को नष्ट करने के बाद अपने श्वसुर का सिर धड़ से अलग कर दिया। यहाँ उन्होंने एक परंपरागत संहारक की भूमिका निभाई। उन्होंने उस सामाजिक व्यवस्था को नष्ट कर दिया, जिसे वे अर्थहीन समझते थे। यह पहली घटना है, जो शिव को किसी बाह्य उत्तेजना पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए दिखाती है। सती के साथ रहने के कारण शिव उनका ध्यान रखने लगते हैं। इतना ध्यान कि सती जब हिंसक तरीके से अपनी जान दे देती हैं तो वे गुस्से और प्रतिशोध की भावना से भर जाते हैं। एक तपस्वी के लिए, जिसने अपने नेत्र खोलने से इनकार कर दिया था, यह एक बड़ा परिवर्तन था।

आकृति 4.8 में शिव को सती का शव ले जाते हुए दिखाया गया है। शिव किसी प्रेमी की तरह रो रहे हैं। सती की मृत्यु के बाद शिव एक बार फिर अपनी गुफा में चले गए और सभी देवता उनके विवाह के लिए एक बार फिर षड्यंत्र रचने लगे। उन्होंने इच्छा के देवता काम को शिव पर तीर छोड़ने के लिए भेजा, लेकिन शिव ने उत्तेजित होने की बजाय अपने तीसरे नेत्र की ज्वाला से काम को भस्म कर दिया। सती के कारण कटु अनुभवों से गुजरे शिव एक बार फिर काम के सामने समर्पण करना नहीं चाहते थे।

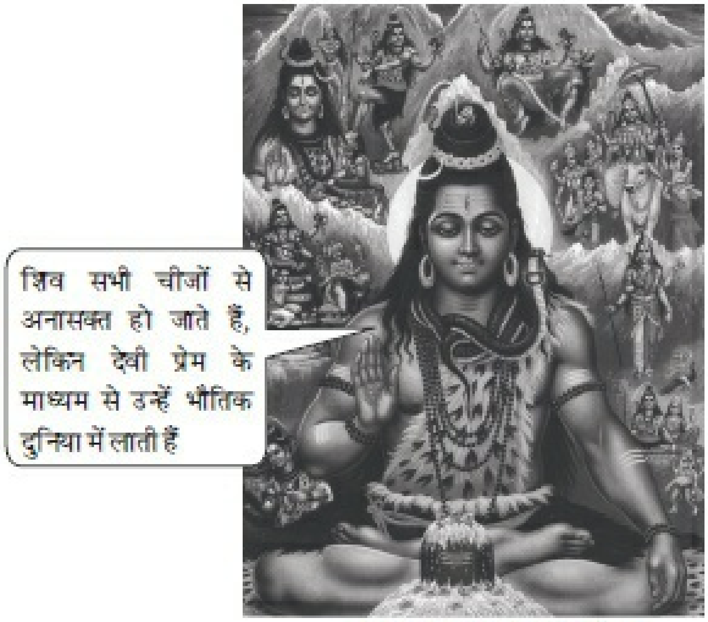

*आकृति 4.7 ध्यानलीन शिव*

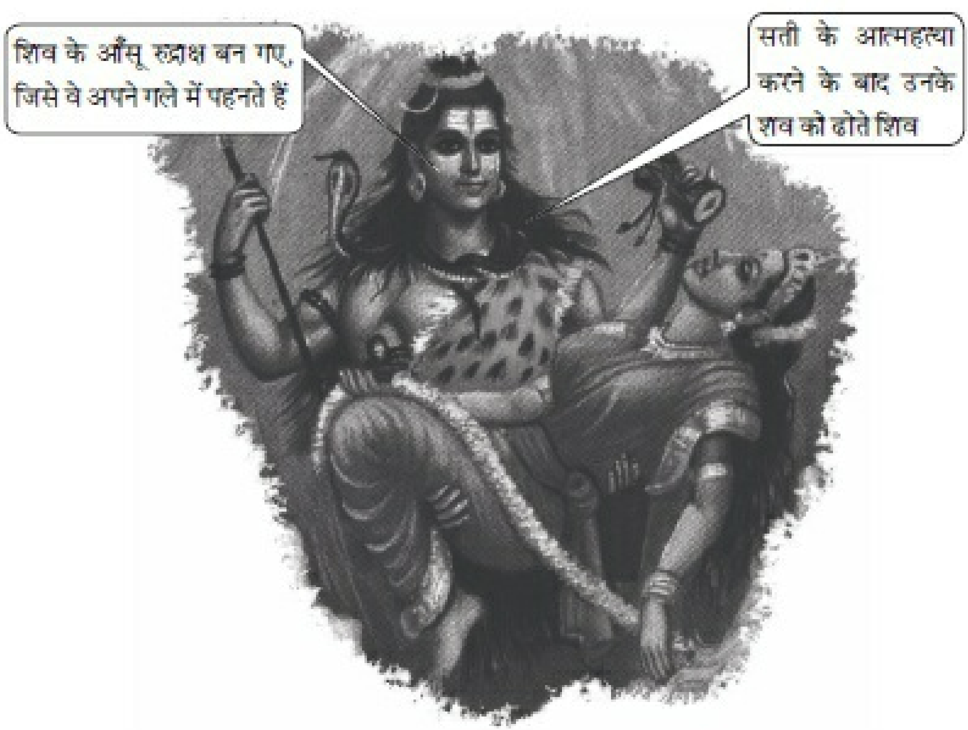


**आकृति 4.8 शिव के हाथ में सती का शव**

सती ने पर्वतराज की बेटी पार्वती के रूप में पुनर्जन्म लिया। उन्होंने शिव की प्रार्थना की, कड़ी तपस्या की जिसके कारण शिव को अपनी गुफा छोड़कर उनके सामने आना पड़ा। शिव ने उनसे पूछा, ''आप क्या चाहती हैं?'' पार्वती ने जवाब दिया, ''आपको पति के रूप में पाना चाहती हूँ।'' पार्वती की दृढ़ता और भक्ति इतनी महान् थी कि शिव को सहमत होना पड़ा। इस तरह शिव को इच्छा के कारण नहीं, अनुग्रह के कारण महादेवी से जुड़ना

पड़ा। पार्वती ने उन्हें शुभचिंतक बनने के लिए प्रेरित किया। इसके साथ शिव गृहस्थ बन गए, शंकर बन गए।

आकृति 4.9 में शिव को वर के रूप में दिखाया गया है, जो अपनी होने वाली पत्नी के घर में जाने के लिए रास्ता बना रहे हैं। योगी होने के कारण वे नहीं जानते थे कि कपड़ा कैसे पहना जाता है या दूल्हे के रूप में बरताव कैसे किया जाता है। वे भस्म लगाए हुए नशे की हालत में आए थे। उनके बारातियों में भूत और पिशाच थे। हिमालयीय क्षेत्र में इस तरह की कई कहानियाँ प्रचलित हैं कि शिव के बारातियों ने किस तरह स्थानीय निवासियों को आतंकित कर दिया था और शिव की तरफ देखते हुए पार्वती की माँ, पर्वतराज हिमालय की पत्नी मीना ने किस तरह अपनी बेटी को अपने फैसले पर पुनर्विचार करने को कहा था। अंततः पार्वती ने शिव सांसारिक राह पर चलने और सजे-धजे दूल्हे के रूप में सामने आने की प्रार्थना की। पार्वती की बात मानकर शिव सोमसुंदर यानी चंद्रमा की तरह सुंदर बन गए और उनसे विवाह किया। यह कहानी हमारा ध्यान इस बात की तरफ खींचती है कि शिव या आत्मा किस तरह सुंदरता और कुरूपता के बीच, मनुष्य और शैतान के बीच, गाय और कुत्ते के बीच भेद नहीं करते। हालाँकि यह एक उत्कृष्ट अवधारणा है, लेकिन सामाजिक ढाँचे में इसका कोई महत्त्व नहीं है। समाज में मानक और मूल्य होते हैं, अच्छा और बुरा होता है, सुंदर और कुरूप होते हैं, सही और गलत होता है। दूसरे शब्दों में, विवेक होता है, लेकिन मानकों के बिना विवेक असंभव है। तपस्वी के लिए ये मानक सांस्कृतिक भ्रांति लग सकते हैं, लेकिन पारिवारिक व्यक्ति के लिए ये सभ्यता के आवश्यक स्तंभ हैं।

आकृति 4.9 वर के रूप में शिव

आकृति 4.10 विषपान करते शिव

आकृति 4.11 यम को रोकते शिव

आकृति 4.12 अपनी जटाओं में गंगा को बाँधते शिव

आकृति 4.10 में शिव की शक्ति दिखाई गई है। यह शक्ति उन्हें विवाह करने से मिली है। देवी ने उनके नेत्र खोल दिए हैं, इसलिए वे दुनिया का विलाप देख सकते हैं। एक बार देवताओं ने अमृत के लिए क्षीरसागर का मंथन किया था। मंथन के दौरान विष भी निकला था, जिससे सारे संसार के नष्ट होने का खतरा पैदा हो गया था। किसी में भी विष पीने की क्षमता नहीं थी। सो, देवतागण शिव के पास गए, जो विष और अमृत के बीच भेद नहीं करते थे। शिव ने देवताओं की प्रार्थना को स्वीकार करते हुए विष को पी लिया और विश्व को बचा लिया। जहाँ तपस्वी

शिव विष पी सकते थे, वहीं पारिवारिक शिव को विष पीने की इजाजत नहीं दी जा सकती थी। इसलिए देव ने उनके कंठ को अवरुद्ध कर दिया, जिससे विष कंठ के नीचे नहीं गया। कंठ में विष पड़ा रहा, जिससे वह नीला हो गया। इसलिए शिव को 'नीलकंठ' भी कहते हैं।

अब एक दूसरा उदाहरण लें। आकृति 4.11 में यह दिखाया गया है कि शिव ने अपने एक युवा भक्त मार्कंडेय की प्रार्थना पर यम को उसके प्राण लेने से रोक दिया। मार्कंडेय को 16 वर्ष की उम्र में मरना था, लेकिन शिव ने भगवान् के रूप में अपनी शक्ति का इस्तेमाल करते हुए मार्कंडेय के भाग्य को बदल दिया। स्पष्ट है, भगवान् भाग्य से भी बड़े हैं।

जब गंगा स्वर्गलोक से पृथ्वीलोक पर उतरीं तो शिव ने उन्हें अपनी जटाओं में बाँध लिया। इसलिए पृथ्वी पर गंगा के गिरने का झटका नहीं लगा। फिर शिव ने उन्हें अपनी शिखा से धीरे-धीरे छोड़ना शुरू किया, जैसाकि आकृति 4.12 में दिखाया गया है। गंगा ने पृथ्वी पर जीवन का संचार किया। मृतक को जलाने के बाद जब उसकी भस्म गंगा में प्रवाहित की जाती है तो उसका पुनर्जन्म होता है। गंगा के सकारात्मक पक्ष को देखें तो वे पुनर्जन्म का अवसर उपलब्ध कराती हैं और उनके नकारात्मक पक्ष को देखें तो वे लगातार अपनी धारा बदलकर दु:ख फैलाती हैं। गंगा की धारा को नियंत्रित कर शिव प्रतीकात्मक रूप से योगी की भूमिका में आ जाते हैं। योगी उसे कहते हैं, जो अपने मन पर नियंत्रण कर उसे भौतिक तत्त्व का दास नहीं बनने देता।

ये तीनों कथाएँ शिव के शंकर रूप में परिवर्तित होने की ओर संकेत करती हैं। विवाहित होकर वे सांसारिक बन जाते हैं। वे विषपान कर संसार को नष्ट

**आकृति 4.13 नटराज के रूप में शिव**

होने से बचाते हैं, लंबी उम्र देते हैं और मृतक के पुनर्जन्म लेने में मदद करते हैं। कहते हैं कि एक बार चंद्रमा क्षय रोग से अभिशप्त हो गया, जिसके कारण उसने शिव के सिर पर शरण ले ली। बुझता हुआ चंद्रमा शिव के संपर्क में आने पर फिर से चमकने लगा, क्योंकि शिव सभी शक्तियों के स्रोत हैं। यही वजह है कि शिव के ललाट पर हमेशा अर्द्धचंद्र दिखता है।

आकृति 4.13 में शिव को नृत्य करते हुए दिखाया गया है। इस मुद्रा को तांडव कहते हैं, जिसका अर्थ है नृत्य का

आक्रामक पुरुषोचित रूप। इस रूप में शिव नटराज में परिवर्तित हो जाते हैं। यह विचित्र नृत्य है, जिसे शिव ने एक बार किया था। ऋषियों ने देखा कि शिव नग्नावस्था में ऊर्ध्व लिंग के साथ कहीं जा रहे हैं। ज्यादातर लोगों की तरह ऋषियों ने इस बात पर गौर नहीं किया कि शिव के नेत्र बंद हैं। इसलिए उन्होंने मान लिया कि शिव उनकी पत्नियों को देखकर उत्तेजित हो उठे हैं। ऋषियों ने उन पर हमला करने और उनके प्राण लेने की कोशिश की। जवाब में शिव नृत्य करने लगे। इस नृत्य में उन्होंने अपने दाएँ पैर पर मजबूती से खड़े होकर बाएँ पैर को जमीन के ऊपर उठा लिया। फिर गतिमान बाएँ पैर की तरफ बाएँ हाथ से इशारा किया। जैसाकि अर्द्धनारी के रहस्य (अध्याय 3) में उल्लेख किया जा चुका है, बायाँ पार्श्व भौतिक संसार का प्रतीक है और दायाँ पार्श्व आध्यात्मिक संसार का। शिव एक-पद हैं। एक-पद का अर्थ है, जो एक पैर पर खड़ा होता है। शिव दाहिने पैर पर खड़े हैं। वे दाहिने पैर पर इसलिए खड़े हैं, क्योंकि आध्यात्मिक संसार में रमे रहते हैं। वे दरअसल यह संकेत करते हैं कि भौतिक संसार की प्रकृति को न समझने के कारण ही हमारे भीतर भय और असुरक्षा का भाव पैदा होता है। भौतिक संसार नश्वर है। यह सम्मोहित करती है, यह उदासीन बनाती है। यह रस का सागर है, जिसमें सकारात्मक और नकारात्मक भावों की तूफानी लहरें उठती हैं।

आकृति 4.14 में शिव के पुत्र कार्तिकेय को दिखाया गया है। कहानी इस प्रकार है कि एक दैत्य ने दुनिया को आतंकित कर रखा था। उस दैत्य को केवल छह दिन का बालक ही मार सकता था। इस तरह के शक्तिशाली बालक के सृजन के लिए देवताओं को शिव की मदद की जरूरत थी, जिन्होंने तपस्वी होने के कारण वीर्य का स्खलन कभी नहीं किया था। परंपरागत धारणा के अनुसार,

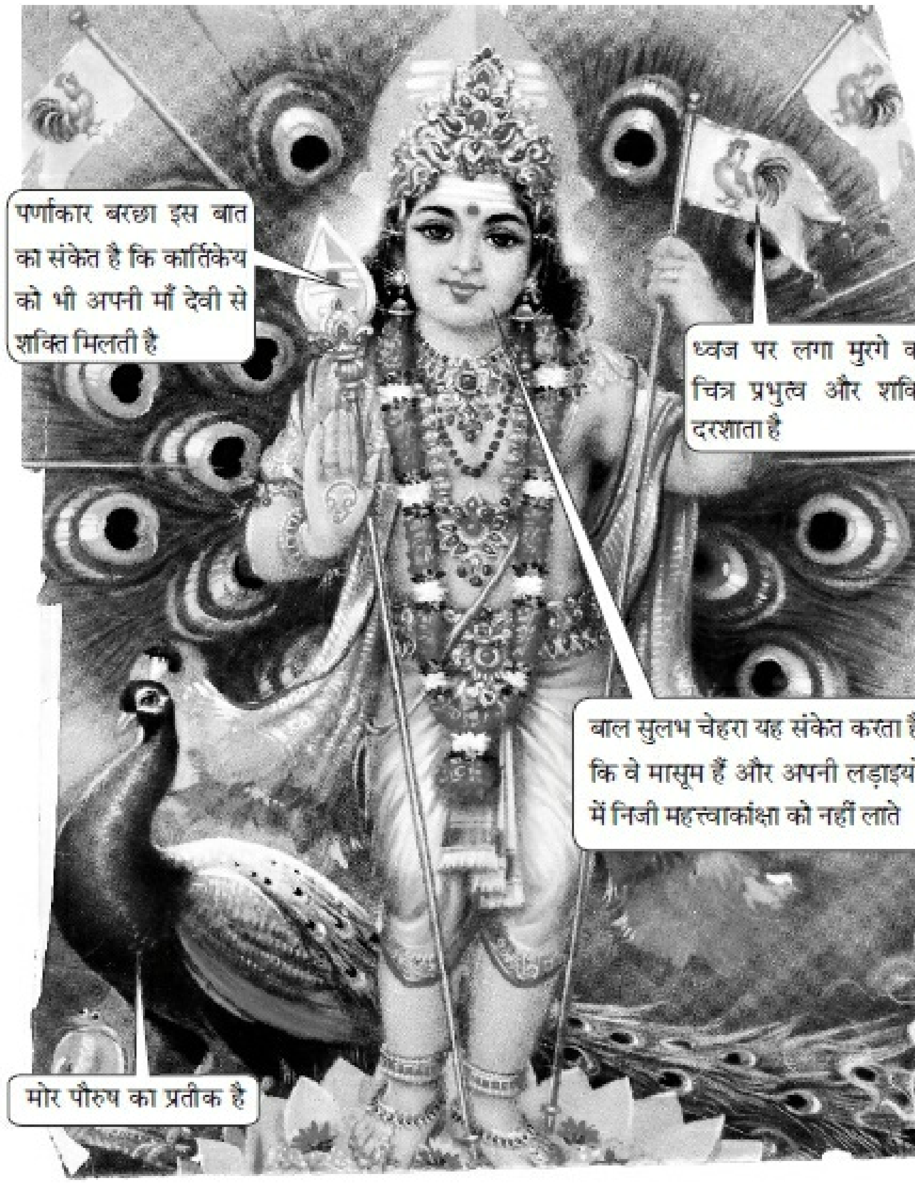


**आकृति 4.14 कार्तिकेय**

इस तरह के वीर्य में बहुत शक्ति होती है। सो, बालक के सृजन के लिए शिव का विवाह जरूरी था। विवाह के बाद जब शिव के वीर्य का स्खलन हुआ तो उसमें अग्नि, वायु, गंगा और सरवन ने शक्ति का संचार किया। इस तरह छह सिरोंवाले बालक का सृजन हुआ। छह कृत्तिकाओं ने उसका पालन-पोषण किया और उसे लड़ाई के लिए तैयार किया। बालक होते हुए भी इस दैवी योद्धा ने देवताओं की सेना का नेतृत्व किया और उन्हें जीत दिलाई।

कार्तिकेय के जन्म की कथा गणेश के जन्म की कथा से भिन्न है। गणेश के जन्म की कथा अध्याय 1 में बताई जा चुकी है। कार्तिकेय का जन्म शिव के वीर्य से हुआ है और उनमें छह भौतिक तत्त्वों (अग्नि, वायु, जल, सरवन, कृत्तिका और स्वयं देवी) ने शक्ति का संचार किया था। इसलिए आकृति 4.15 में उनके छह सिर दिखाए गए हैं। गणेश के शरीर की रचना उस हल्दी से हुई थी, जिसका लेप पार्वती ने अपनी त्वचा पर किया था। अंतत: गणेश के धड़ पर शिव ने हाथी का सिर जोड़ दिया, तब जाकर उनकी रचना पूरी हुई। कार्तिकेय और गणेश दोनों ही भगवान्

और देवी के संयोग के प्रतीक हैं। कार्तिकेय के सृजन में भगवान् अगुआई करते हैं और गणेश के सृजन में देवी; लेकिन दोनों मामलों में शिव उदासीन रहते हैं। उन्हें पिता बनने के लिए बाध्य करना पड़ता है। इस तरह आध्यात्मिकता खुद अपने को भौतिक जगत् से अलग करना चाहती है, जबकि भौतिक जगत् उसे सम्मोहित करना चाहता है। दोनों के बीच इस टकराव से वह बल उत्पन्न होता है, जो जीवन को चलाता है।

शिव की तरह कार्तिकेय के विवाह के बारे में भी अलग-अलग धारणा है। उत्तर भारत में उन्हें अविवाहित माना जाता है, जबकि दक्षिण भारत में उनकी एक नहीं बल्कि दो पत्नियाँ मानी जाती हैं। यहाँ भी भौतिक जगत्, यानी समाज से जुड़े रहने के लिए विवाह एक रूपक माना जाता है। आकृति 4.15 और आकृति 4.16 में दिखाई गईं कार्तिकेय की पत्नियाँ दक्षिण में बहुत लोकप्रिय हैं। उनके नाम देवसेना और वल्ली हैं। देवसेना इंद्र की बेटी थी और वल्ली एक स्थानीय आदिवासी सरदार की। इस तरह तपस्वी का विवाह आकाश और पृथ्वी से हुआ था। कई मायने में यह संबंध खंडोबा की तरह है, जिनकी पत्नियाँ विभिन्न समुदाय की थीं (आकृति 1.7)। इसी तरह बालाजी ने स्थानीय

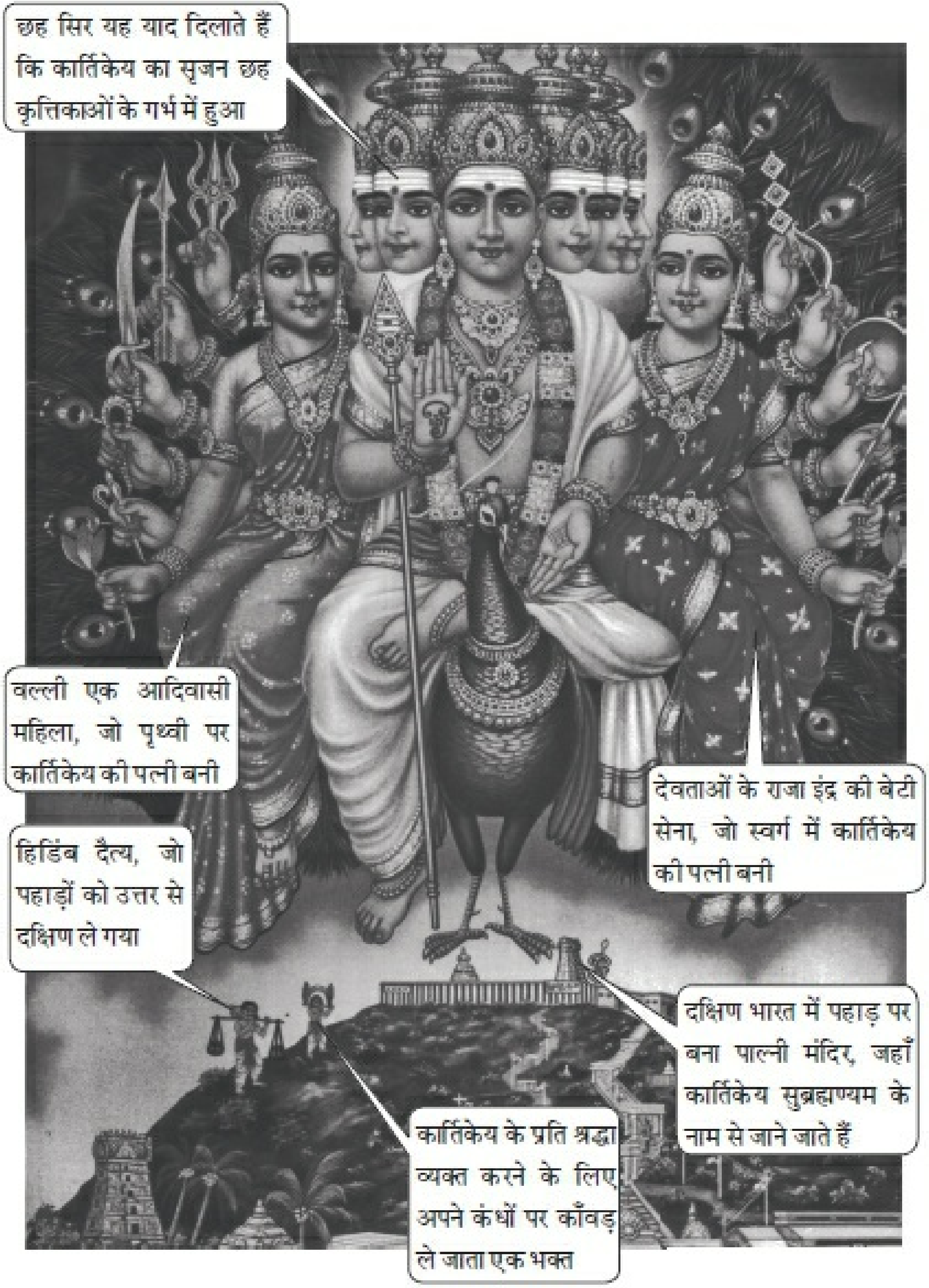


**आकृति 4.15 सुब्रह्मण्यम के रूप में कार्तिकेय**

राजकुमारी पद्मावती से शादी की थी (आकृति 1.8)। इस तरह कार्तिकेय के जरिए ज्ञानातीत आध्यात्मिक शिव का स्थानीयकरण कर दिया गया है और उन्हें दक्षिण की पहाड़ियों में अधिक सुगम बना दिया गया है। दक्षिण में ज्यादातर शिव की पूजा होती है।

उत्तर भारत में कहा जाता है कि कार्तिकेय ने विवाह नहीं किया। कारण स्पष्ट नहीं हैं। जैसी कि जनश्रुति है, अपने भाई गणेश के साथ प्रतियोगिता के बाद गुस्से में कार्तिकेय ने किसी स्त्री, यहाँ तक कि अपनी माँ की तरफ भी न देखने की कसम खा ली। यही वजह है कि उत्तर में कार्तिकेय के कुछ मंदिरों में स्त्रियों का प्रवेश मना है। अपनी माँ से दूर रहने के लिए कार्तिकेय ने अपने पिता का घर भी छोड़ दिया। वे दक्षिण चले गए; लेकिन जल्दी ही उन्हें उत्तर की पहाड़ियों की याद सताने लगी। बेटे की गृहासक्ति को महसूस करते हुए शिव ने हिडिंबा नाम के राक्षस को उत्तर से दक्षिण दो पहाड़ ले जाने का आदेश दिया। ये पहाड़ अब तीर्थस्थल हैं। कहा जाता है कि कार्तिकेय यहाँ रहते हैं। दक्षिण में उनकी पूजा या तो कुमार (अविवाहित) या फिर सुब्रह्मण्यम (विवाहित देवता) के रूप में की जाती है।

आकृति 4.16 में आड़े-तिरछे दो त्रिभुजों को दिखाया गया है। यह भौतिक और आध्यात्मिक तत्त्वों के संयोग का ज्यामितीय प्रतीक है। ऊर्ध्व शीर्षवाला त्रिभुज स्थिरता, शांति और भगवान् का प्रतीक है। अधो शीर्ष वाला त्रिभुज झरने की तरह अस्थिरता, गतिशीलता और देवी का प्रतीक है। जब वे अलग होते हैं तो शिव के डमरू की तरह दिखते हैं (देखें आकृति 4.1), लेकिन जब वे जुड़ जाते हैं तो छह शिराओंवाले तारे की शक्ल ले लेते हैं। आकृति 4.5 में इस तरह के कई तारे देवी के नीचे दिखाए गए हैं। इन्हें यंत्र या आध्यात्मिक विचारों का ज्यामितीय रूप कहा जाता है।

आकृति 4.17 में यह ज्यामितीय रूप तीन आयाम धारण कर लेता है। इस आकृति में शिवलिंग दिखाया गया है। ऊपर की तरफ निकले हुए स्तंभ के पीछे वही धारणा है, जो कि ऊर्ध्व शीर्षवाले त्रिभुज की है। दोनों ही शिव के ऊर्ध्व लिंग के प्रतीक हैं, क्योंकि शिव धरती पर पट लेटे हुए हैं। नीचे की द्रोणिका, जिस पर स्तंभ खड़ा है, अवधारणात्मक रूप से अधो शीर्षवाले त्रिभुज की तरह

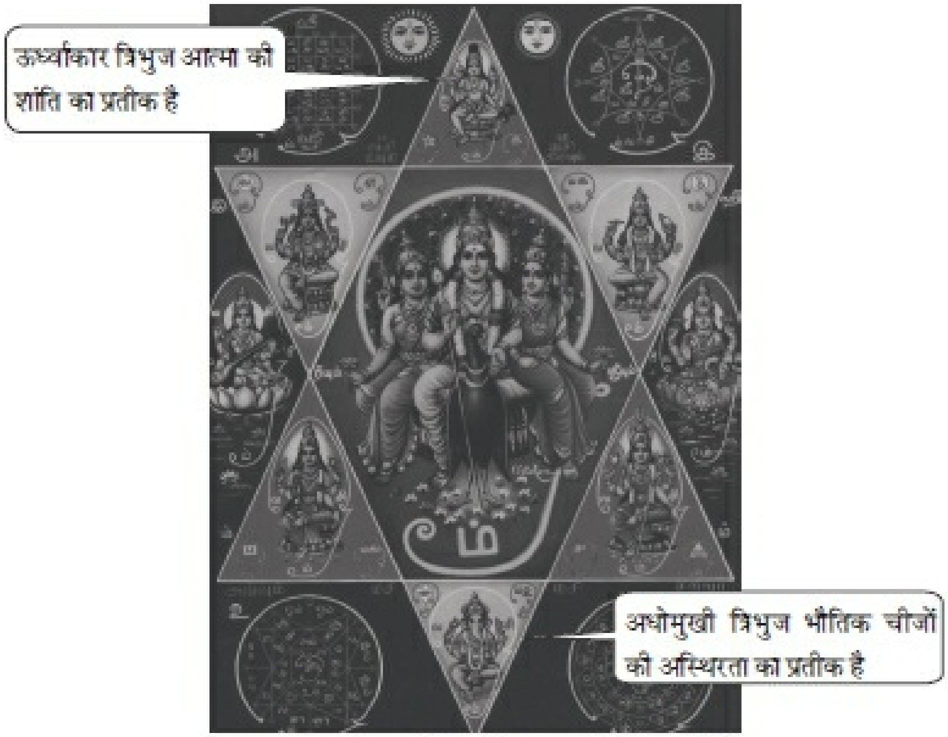


*आकृति 4.16 पुरुष के रूप में कार्तिकेय अपनी दो पत्नियों के साथ*

**आकृति 4.17 शिवलिंग**

है। ये दोनों ही देवी के गर्भाशय के प्रतीक हैं, क्योंकि देवी शिव के ऊपर बैठी हुई हैं, जैसाकि आकृति 4.4 और 4.5 में दरशाया गया है। इस तरह यह तत्त्व के परिवर्तनशील रूप (अधो शीर्षवाले त्रिभुज/योनि) और आत्मा के अपरिवर्तनशील रूप (ऊर्ध्व शीर्षवाले त्रिभुज/लिंग) का संयोग है।

गोल पेंदीवाला पात्र शिवलिंग के ऊपर टँगा रहता है। पेंदी में एक छेद होता है, ताकि जल निरंतर टपकता रहे।

यह इस बात का प्रतीक है कि भौतिक जीवन गतिशील है और जीवन पात्र से टपकते जल की तरह कम होता जाता है। इसलिए हमें इस सीमित समय का सदुपयोग आत्मा और भौतिक तत्त्व की सच्चाई को खोजने तथा यह समझने में करना चाहिए कि उनके संयोग से किस तरह सृजन होता है और पृथक् होने से विनाश।

❑❑❑